द्वन्द्व समास - Contd.

(c) इतरेतर-योग - जिस समास (द्वन्द्व) का प्रत्येक पद अपने में महत्त्वपूर्ण होकर अपनी व्याख्या करता है, उसे इतरेतर योग कहते हैं। यथा - धवखदिरौ छिन्धि (धव और खैर को काटो) इसमें दोनों पद 'धव' और 'खदिर' एक ही क्रिया 'छिन्धि' से अन्वित होने के कारण इतरेतर योग वाले हैं।

(d) समाहार - से हमारा तात्पर्य 'समूह' होता है। जब 'पदार्थ' कहकर पदार्थों के समूह का अर्थ परिलक्षित होता है तो वह समाहार कहलाता है। यथा - संज्ञापरिभाषम् - इस पद में संज्ञा च परिभाषा च' के एकरूपात्मक होने के कारण एकवचन और नपुंसकलिंग का प्रयोग होता है।

यहाँ एक बात और स्पष्ट हो जाए कि अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि समास में प्रयोः से (समस्त पद) एकपद बनाने के लिए अनेक सूत्रों का प्रयोग रूप सिद्धि में बताया जाता है, वहीं द्वन्द्व समास में 'चार्थे द्वन्द्वः' इसी एक सूत्र का मुख्य रूप से प्रयोग होता है।

रूपसिद्धि - (a) धवखदिरौ - लौ० वि० धवश्च खदिरश्च, अलौ० विग्रह धव + सु, खदिर + सु। 'चार्थे द्वन्द्वः' से 'च' के अर्थ में धव और खदिर पद का समास हुआ। 'कृत्त०...' से प्राति० संज्ञा, 'सुपो०...' से विभक्ति का लोप होकर - धव + खदिर - धवखदिर, 'अल्पाच्तरम्' से पू०नि० उसकी प्रातिपदिक संज्ञा हुई। प्रथमा द्विवचन में 'औ' विभक्ति लगाकर 'धवखदिरौ' रूप सिद्ध हुआ।

(b) संज्ञापरिभाषम् - लौ० वि० - संज्ञा च परिभाषा च तयोः समाहारः, अ० वि० - संज्ञा + सु + परिभाषा + सु

Same as धवखदिरौ।

Scanned with CamScanner

983 - राजदन्तादिषु परम् - २।२।३१

यह विधिसूत्र है। राजदन्तादि गण में राजदन्त, अग्रेवण, लिप्तवासित, नग्नमुषित तथा दम्पत्ति एवं जम्पती आदि आते हैं। उपसर्जनं पूर्वम् से होनेवाले पूर्वनिपात के उलट इस सूत्र से उपसर्जन का 'परं' (बाद में) प्रयोग होता है।

यथा - राजदन्तः - लौ० वि० - ~~समासकं दर्शिष्ठ~~
दन्तानां राजा अलौ० वि० - दन्त + आम् + राजन् + सु। 'षष्ठी' सूत्रानुसार दन्त पद का राजन् पद के साथ समास हुआ। 'कृत्तद्धित०' से प्रातिपदिक संज्ञा, सुपो धातु..० से विभक्ति लोप, प्रथमा..' से होनेवाले पूर्व निपात का 'राजदन्तादिषु परम्' सूत्र से बाध होकर पर निपात हुआ। राजदन्त + स्वादि कार्य होकर राजदन्तः सिद्ध हुआ।

(b) अर्थधर्मौ ~ धर्माथौ - अर्थश्च धर्मश्च

Same as राजदन्तः।

984 - 'द्वन्द्वे घि' - २।२।३२ - यह विधिसूत्र है। सूत्र के अर्थ हैं द्वन्द्व समास 'घि संज्ञक' पदों का पूर्वनिपात होता है। (इसके लिए 'शेषो घ्यसखि' देखना है।)

यथा — हरिहरौ - लौ० वि० - हरिश्च हरश्च
अ० वि० - हरि + सु हर + सु। 'चार्थे द्वन्द्वः' से समास, 'कृत्त०.०' से प्राति० संज्ञा, सुपो..० से विभक्ति का लोप होकर ~~हरिहरहरि~~ हरहरि बना, 'शेषो घ्यसखि' से घि संज्ञक हरि शब्द होने के कारण 'द्वन्द्वे घि' से उसका पूर्वनिपात होकर हरिहर हुआ, प्रथमा द्विवचन में 'औ' विभक्ति लगाकर 'हरिहरौ' रूप सिद्ध हुआ।

UMA PATHAK
SANSKRIT DEPTT
Sidhanta Kaumudi
B.A. Ist Yr.

Scanned with CamScanner